ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

जुत्ती या टोपी

आज हम नारा दे रहे हैं कि 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' पर अन्तरात्मा को झिंझोड़ने वाला प्रश्न यह है कि जो बेटियाँ बची हुई हैं और जो पढ़ी हुई हैं, क्या वे खुश हैं? यदि उत्तर यह है कि खुश नहीं हैं तो फिर पहले इन बची हुई और पढ़ी हुइयों को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाने की मुहिम चलाएँ। और यदि उत्तर यह है कि खुश हैं, फिर तो इस नारे की जरूरत ही नहीं है।

किस हालत में है आधी आबादी?

जब-जब नारी सशक्तिकरण की बात चलती है हम मंचों पर, होर्डिंग्स पर गिनी-चुनी सशक्त नारियों के नाम बखान कर खुश हो लेते हैं कि मदर टेरेसा, इन्दिरा गांधी, कल्पना चावला, झांसी की रानी, किरण बेदी, पी.टी.उषा, सानिया मिर्जा.....आदि-आदि सशक्त महिलाओं ने इतिहास रचकर, नारी जाति का नाम रोशन कर दिया है। सवाल यह है कि इनके अलावा भारत की आधी आबादी (लगभग 60 करोड़ महिला वर्ग) किस हालत में है, किस परिस्थिति में जी रही है?

उत्तर भारत के गाँवों में और शहरों में भी महिला सशक्तिकरण अभियान के दौरान कई ऐसी बातें सुनने को मिली जिन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि नवजागरण रूपी सर्प का केवल मुँह ही 21वीं शताब्दी तक आया है, उसकी पूंछ अभी भी 17वीं शताब्दी में है। आबादी के तेजी से शहरीकरण के बावजूद उनकी सोच का शहरीकरण नहीं हो पाया है और नारियाँ रूढ़ीवादी सोच में स्वयं भी बंधी हुई हैं और दूसरों द्वारा भी बांधी गई हैं। आइये देखें, नारी पर लादी गई अपमानजनक बातों रूपी बेड़ियों की एक झलक जिन्हें मिटाए बिना, हटाए बिना उसकी सम्मानजनक तस्वीर बन ही नहीं सकती।

पति को खा गई

आज भी देश और समाज के कुछ हिस्से ऐसे हैं जहाँ यदि नवविवाहित स्त्री का पति शरीर छोड़ दे तो उसे दबे-छिपे या सीधे-सीधे भी यह सुनना पड़ता है कि यह तो ऐसी डायन है जो पति को ही खा गई। यदि नवविवाहित पुरुष की स्त्री चली जाए तो उसे कोई नहीं कहता कि स्त्री को खा गया। तो क्या नारी, नरभक्षिणी है? क्या उसे पति को खाने का शोक है? एक तो वह विधवा होने के दुख से दुखी है और ऊपर से उसके प्रति सहानुभूति दिखाने के बजाए जले पर नमक छिड़का जाता है, हम ऐसे निष्ठुर और पत्थर दिल हैं! लम्बी आयु सौभाग्य है और यह सभी को अपने-अपने कर्मों से मिलती है। अगर किसी की आयु कम है तो इसमें किसी अन्य का क्या दोष है? हम ऐसे सदमे की शिकार महिला को स्नेह दें, सम्मान दें, उसकी शक्ति किसी सार्थक कार्य में नियोजित करें, यही हमारा कर्तव्य है। लांछनों से उसे छलनी न करें।

पाँव की जुत्ती

आधुनिकता के रंग में तेजी से रंगते समाज में आज भी कई लोग नारी को पाँव की जुत्ती का दर्जा देते हैं। ऐसे लोगों से कोई पूछे कि यह अपमान किसका है? इस अर्थ में तो ऐसा कहने वालों के बच्चे जुत्ती के बच्चे हुए और वे स्वयं भी क्योंकि माँ के लिए कहे गए अपमानजनक शब्द सीधे-सीधे उसकी सन्तान के माथे का कलंक बन जाते हैं। यदि हम नारी को सिर की टोपी कहते तो इससे हमारा ही गौरव बढ़ता, हम टोपी के बच्चे होते। अगर नारी जुत्ती है तो पुरुष क्या हुआ? हम ऐसे कुशब्द उसके लिए प्रयोग न करें जो हमें जन्म देने वाली, संस्कार देने वाली, संरक्षण देने वाली और अपने लिए न जीकर हमारे लिए जीने वाली है।

नरक का द्वार

शंकराचार्य जी बहुत बड़े विद्वान हुए हैं। उनके त्याग और तप का बखान करना इस साधारण कलम का कार्य नहीं। उन्होंने संन्यास धर्म की स्थापना की। अपनी माँ को उन्होंने वचन दिया कि वे उसके अन्तिम संस्कार पर हाज़िर हो जाएंगे और वे हुए भी, अपना वचन निभाया भी। माँ को इतना सम्मान देने वाले उन्हीं शंकराचार्य ने लिख दिया, नारी नरक का द्वार है। वास्तव में तो काम विकार नरक का द्वार है। यह जिसमें भी प्रवेश होता है, चाहे नर, चाहे नारी – दोनों ही नारकीय हो जाते हैं। इससे बचने के लिए किसी वर्ग से दूर भागने या जंगल में जाने की जरूरत नहीं बल्कि देह के भान से परे रहने की जरूरत है। देह तो मुखौटा है। मुखौटा का अर्थ है खोटा मुँह। कोई भालू या शेर का मुखौटा लगाकर खेल दिखाता है तो सचमुच शेर या भालू नहीं हो जाता, इसी प्रकार नर शरीर या नारी शरीर तो मुखौटा है, वास्तविक मुख (पहचान) तो यह है कि हम आत्मा हैं, ज्योतिबिन्दु रूप हैं, प्रकृति के शरीर को धारण कर सृष्टि मंच पर पार्ट बजा रही हैं। हमारा वास्तविक घर ब्रह्मलोक है।

ताड़न की अधिकारी

महाकवि तुलसीदास की जीवन कहानी हम सभी ने सुनी है। वे नदी में तैरते एक मुर्दे पर चढ़कर अपनी पत्नी से मिलने उसके पीहर घर पहुँच गए थे। तब पत्नी रत्नावली ने उन्हें फटकारा था कि जितना प्रेम मेरे इस हाड-माँस के पुतले से है, इतनी प्रीत राम से होती तो कल्याण हो जाता।

तुलसीदास जी को यह बात लग गई। वे राम की प्रीत में खो गए और ' रामचरित मानस ' की रचना कर डाली। इस उत्कृष्ट ग्रन्थ में उन्होंने न्याय, नीति, धर्म की अनेक बातें लिखी पर यह भी लिख डाला कि 'ढोल गँवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी'। विचारणीय तथ्य है कि उनको राम की प्रीत का मार्ग दिखाने वाली एक नारी ही तो थी। उन्हें तो उसका कृतज्ञ होना चाहिए था। 'मानस' के प्रारम्भ में इसकी चर्चा करनी चाहिए थी कि मुझे महाकवि बनाने वाली एक नारी है, मैं उसका कृतज्ञ हूँ। उसकी भेंट में वे तो नारी को ताड़न की अधिकारी बना गए, तो क्या वे रत्नावली से चिड़े हुए थे? इस लिखत से समाज की अतुलनीय हानि हुई। पुरुषों को नारियों को पीटने का, अत्याचार करने का लाइसेंस मिल गया। समाज के लोगों ने तुलसीदास की अन्य शिक्षाओं को 'मानस' में पढ़ा या नहीं पर इस लाइन को तो अच्छे से रट लिया। अभियान के दौरान एक ऐसी महिला की व्यथा सामने आई जो उप-पुलिस अधीक्षक है, एक डॉक्टर से उसकी शादी हुई है और डॉक्टर पति से रोज पिटती है। इस हिंसा के पीछे कारण यह बताया गया कि पति उसके पद का दुरुपयोग करता है, लोगों से नाजायज कार्य करवा लेता है, जब वह विरोध करती है तो हिंसा पर उतारू हो जाता है। हमें यह भी बताया गया कि दोनों के रिश्ते तलाक के कगार पर पहुँच गए हैं। नारी पढ़ी-लिखी हो या अनपढ़, घरेलु हिंसा के कारण तन और मन से शक्तिहीन हो रही है। अत: आज 'बेटी बचाओ' से भी ज्यादा यह आवाज उठाने की जरूरत है 'बची हुई बेटियों को घरेलु हिंसा, सामाजिक हिंसा, शारीरिक प्रताड़ना से बचाओ'।

लिंग-भेद के आधार पर प्रतिबन्ध

अभियान के दौरान लुधियाना में एक गैर-सरकारी संस्थान के संचालक से मिलना हुआ। उन्होंने पंजाब के अनेक स्वतन्त्रता सेनानियों, जिन्हें अंग्रेज सरकार द्वारा फांसी पर चढ़ा दिया गया था, की तस्वीरें और मॉडल बनाकर एक कमरा उनको सर्मपित किया हुआ है। वे हमें बताने लगे कि परतन्त्रता के दौरान भारतीयों को अंग्रेज लोग ब्लैक डॉग (काले कुत्ते) कहकर पुकारते थे और होटलों, आरक्षित ट्रेनों, अच्छे बाजारों में उनका जाना प्रतिबन्धित था। हमने उनसे कहा, अंग्रजों ने, भारतीयों को अपमानित किया और भारत के ही लोग, भारत की ही माताओं-बहनों को अपमानित करते आ रहे हैं, अब भी कर रहे हैं। देश आजाद हो गया पर ये माताएँ-बहनें आजाद कब होंगी? हमने उन्हें बताया कि आज भी बहुत-से मन्दिर हैं जहाँ लिंग भेद के कारण नारियों का जाना वर्जित है। बहुत-से लोग आज भी इस पुरानी सोच के साथ जी रहे हैं कि नारी चिता के पास ना जाए, वेद या शास्त्र ना पढ़े, हनुमान जी और शिव जी के मन्दिर में ना जाए। बहुत-से महात्मा आज भी नारी का मुख नहीं देखना चाहते। क्या इन सब प्रतिबन्धों के लिए नारी दोषी है या हमारी विकृत सोच दोषी है?

माताएँ क्यों जिन्दा शहीद हो रही हैं?

उनके संस्थान में निशुल्क सिलाई सीखने वाली बहनों से जब पूछा गया कि घर में पक्षपात या हिंसा की शिकार कौन-कौन बहनें हैं, तो कुछ हाथ खड़े हो गए। हमने कहा, शहीद तो गए, उनकी यादें प्रेरणा देती हैं, उन्होंने हिंसा सही आजादी जैसे महान उद्देश्य के लिए पर ये माताएँ-बहनें क्यों सहती हैं? ये क्यों जिन्दा शहीद हो रही हैं? आजाद देश की ये माताएँ-बहनें बिना किसी कारण के क्यों सताई जा रही हैं, हमें यह भी तो जानना चाहिए ना। वे दयालु अन्दर तक पसीज गए और हाथ खड़े करने वाली महिलाओं से व्यक्तिगत रूप से मिलने और स्थिति की पूरी तरह जाँच करने और समाधान करने का आश्वासन उन्होंने दृढ़ संकल्प के साथ दिया।

विकृत मानसिकता का जड़ से उन्मूलन करें

उपरोक्त विकृत बातें सर्वप्रचलित नहीं पर कुछ लोगों के मनों में घर किए हुए हैं, परन्तु बुराई चाहे बहुप्रचलित हो या अल्प प्रचलित, है तो बुराई ही। सरकार ने पोलियो को जड़ से समाप्त करने का अभियान चला रखा है, हर बच्चे को अनिवार्य रूप से पोलियो की खुराक पिलाई जाती है, महिलाओं के प्रति अपमानजनक शब्द प्रयोग करने की मानसिकता का भी जड़ से उन्मूलन होना चाहिए। यह मानसिक विकृति या विकृत सोच शारीरिक बीमारियों से कई गुणा अधिक घातक है। इसे मिटाए बिना 'बेटी बचाओ,बेटी पढ़ाओ' अभियान सफल कैसे होगा? बेटी ही तो बड़ी होकर एक नारी का रूप धारण करेगी और नारी बनने के बाद उसे भी यदि समाज में प्रचलित अपमान का जहर पीना पड़े तो उसके बचने और पढ़ने पर प्रश्नचिन्ह जरूर लगेगा। आइये, प्रण करें हम समस्त नारी जाति से सम्मानजनक व्यवहार करेंगे।